International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 11 Issue 6, Nov.-Dec, 2023, Impact Factor: 7.326

वैदिक ज्ञान परंपरा मे ईश्वर का विराट स्वरूप

कलावती आर्या

शोध छात्रा, श्री लाल बहादुर शास्त्री केन्द्रीय, संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली

ईश्वर का वैदिक स्वरूप :-

वेद भगवान कहता है की **'ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।'**[1] और तत्वदर्शियों के अनुभवके अनुसार ईश्वर सर्वत्र विराजमान है। संसार के कण कण में व्याप्त है। यह पृथ्वी, जल, वायु, सूर्य, और आकाश जो सर्वत्र व्याप्त है और प्रत्यक्ष भी है इन सभी में ईश्वर समाया हुआ है । मुण्डोकपनिषद्, द्वितीय मुण्डक, प्रथम खंड के चौथे मन्त्र में कहा गया है –

अग्निर्मूर्धा चसुक्षि चंद्रसूर्यो दिशः क्षोत्रे वायु विवत्राश्च।
वायुः प्राणो ह्रदय विश्वमस्य पद्भ्यां पृथिवी ह्रोष सर्व भूतान्तरात्मा।[2]

अर्थात् यह सम्पूर्ण प्रकृति, सृष्टि ही ईश्वर का विराट स्वरुप है। इस विराट स्वरूप परमेश्वर का अग्नि अर्थात द्युलोक ही मानो मस्तक है, चन्द्रमा और सूर्य दोनों नेत्र हैं, समस्त दिशाएं मानो कान हैं , नाना छंद और वेद की ऋचाएं वाणी है , वायु प्राण है , सम्पूर्ण चराचर जगत ह्रदय है , पृथ्वी मानो उनके पैर हैं। , ये ही परब्रह्म परमेश्वर समस्त प्राणियों के अन्तर्यामी परमात्मा हैं. अर्थात यह समस्त ब्रह्माण्ड ही ब्रह्म का विराट स्वरुप है।

गीता में ईश्वर के विराट स्वरुप का साक्षात्कार

यदि हम ईश्वर के विराट स्वरुप का साक्षात्कार चाहते हैं जो सर्वत्र विराजमान है, तो हमें उसकी छवि को , उसकी रचना को , उसके व्यक्त स्वरुप को , प्रतेयक प्राणी में , वनस्पति, पेड़-पौधों, फल-फूल, पर्वत, नदी आदि में सर्वत्र में देखना, महसूस करना होगा। यह सुन्दर संसार ही उसका विराट स्वरुप है। यदि हमें ईश्वर को प्राप्त करना है , उससे साक्षात्कार करना चाहते है, उसके दर्शन करना चाहते है तो हमें गीता की अमृतमय वाणी का अनुसरण करना होगा –

यो माँ पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहम न प्रणश्यामि स च में न प्रणयश्यति ।।[3]

अर्थात् जो मुझे सर्वत्र कण कण में देखता है, और सब कुछ मेरे ही अंदर देखता है, मैं उसके लिए अदृश्य नहीं हूँ और न वह मेरे लिये अद्दृश्य है, अर्थात् ईश्वर सर्वत्रव्यापक है ।

---

[1]यजुर्वेद ४०/१

[2]मुण्डोकपनिषद् 1/2/4

[3]गीता 6/30

ऋग्वेद के पुरुष सूक्त की ऋचा के आधार पर ईश्वर एक अंश मात्र से संपूर्ण जगत् की रचना करते है ।

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥[4]

यह मन्त्र छान्दोग्य उपनिषद् (3.12.6) में भी है । स्पष्ट है कि जब भगवान् एक ही अंशमात्र से इस सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है तो पूर्ण परब्रह्म का स्वरूप मानव कल्पना के बाहर की बात है ।

अर्जुन कहता है : - हे श्रीकृष्ण ! जैसा तुम कहते हो , व्यास और नारद आदि भी वैसा ही कहते हैं । मैं ऐसा अनुभव करता हूँ कि तुम्हीं समस्त जगत् के निर्माता - उत्पत्ति करने वाले हो । तुम्हारी अमृत तुल्य वाणी से तुम्हारी विभूतियों को विस्तार से सुनना चाहता हूँ ।

भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा हें अर्जुन इस सृष्टि का आदिमूल परब्रह्म में हूँ, सभी के मूल तत्त्व भी में ही हूँ। जो इस सत्य का अनुभव करता है वह जानता है कि यह मूलतत्त्व सनातन है । आगे भगवान् श्रीकृष्ण ने इस प्राणी जगत् की उत्पत्ति में वैदिक साहित्य की पुष्टि की है ।

पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः । नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥
पश्यादित्यान्वसूरुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा । बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत॥[5]

सर्व प्रथम मुझसे वासुदेव (आत्मा) संकर्षण (जीव) , प्रद्युम्न (मन) , अनिरुद्ध (अहंकार - विलगाव या पार्थक्य का भाव), सप्तऋषि और मनु प्रकट हुए , जिन्होंने सम्पूर्ण प्रजा की उत्पत्ति की । ये भगवान् के मानस पुत्र कहे जाते हैं । ज्ञानी लोग यह जानकर कि सब वस्तुओं और प्राणियों का मूल मैं ही हूँ (परब्रह्म ही है) भाव युक्त होकर स्त त, स्मरण एवं ध्यान करते हैं ।

श्रीकृष्ण विश्वस्वरूप का वर्णन करते हुए बताते हैं कि सभी प्रमुख देवों , गंधर्वो, प्राणियों में उन्हीं का तत्त्व व्याप्त है । नदियों में गंगा, पर्वतों में मेरु, स्थिरता में हिमालय, मत्स्यों में मगर, पशुओं में सिंह, पक्षियों में गरुड़ आदि ये सभी मेरी विभूतियां हैं । मेरी विभूतियों का कोई अन्त नहीं है, वे अनन्त हैं। विभूतितत्त्व का उपसंहार करते हुए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् ॥
अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन ।विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥[6]

जो भी वस्तु वैभव, लक्ष्मी या प्रभाव से युक्त है, उसको तुम मेरे ही तेज के अंश से उत्पन्न हुई समझो । हे अर्जुन ! तुम्हें मेरी विभूतियों के विस्तार को जानकर क्या करना है ? संक्षेप में तुम्हेंयह बतला देता हूँ कि मैं अपने एक ही अंश - मात्र से इस सम्पूर्ण जगत् को विशेषरूप से दृढ़ता - पूर्वक धारण करके (विष्टभ्य) स्थित हूँ । इस प्रकार इस चराचर का मूल मैं (परब्रह्म) ही हूँ । जो कुछ विभूतियां मैंने बताई हैं जो कि यह दृश्य जगत् है, मेरी शक्ति का अंश - मात्र है ।

[4]ऋग्वेद 10.90.3

[5]गीता 11 /5-6

[6]गीता 10/42

हे परन्तप ! मेरी दिव्य विभूतियों का कोई अन्त नहीं है। यह जो मैंने विभूतियों का विस्तार तुझे बतलाया है, वह केवल दिग्दर्शन कराने के उद्देश्य से बतलाया है। इस जगत् में जो - जो वस्तु विभूतिवाली है , श्री वाली है , ऊर्जा वाली अर्थात्शक्तिशाली है, उस - उस को मेरे तेज के अंश से ही उत्पन्न हुआ समझ। हे अर्जुन ! तुझे इस बहुत बड़े विस्तार को जानकर क्या करना है ? (एक वाक्य) में यह समझ ले कि अपने एक अंश मात्र से इस समूचे जगत् को थामे मैं ठहरा हुआ हूँ ॥

निष्कर्ष :-

अन्त का श्लोक ऋग्वेद के पुरुष सूक्त की ऋचा के आधार पर कहा गया है। **पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि।**[7] और यह मन्त्र छान्दोग्य उपनिषद् (३.१२.६) में भी है। स्पष्ट है कि जब भगवान् एक ही अंशमात्र से इस सम्पूर्ण जगत् में व्याप्त है तो पूर्ण परब्रह्म का स्वरूप मानव कल्पना के बाहर की बात है। पुरुष सूक्त में यह भी कहा गया है कि (**एतावान् अस्य महिमाऽतो ज्यायांश्च पूरुषः यजु**।[8] यह इतनी इसकी महिमा ' हुई, पुरुष तो इसकी अपेक्षा कहीं श्रेष्ठ है। इस अध्याय के प्रारम्भ में यही बताया गया है कि इस सृष्टि का आदिमूल परब्रह्म है जिसे वैज्ञानिक भाषा में ऊर्जा कहें या परमतत्त्व। सारा वर्णन उत्तम पुरुष में किया गया है। सभी के मूल में वही मूल तत्त्व है। जो इस सत्य का अनुभव करता है वह जानता है कि यह मूलतत्त्व सनातन है , ऐसा व्यक्ति ही सभी प्रकार के पापों व कर्मबन्धन से मुक्त होता है। आगे भगवान् श्रीकृष्ण ने इस प्राणी जगत् की उत्पत्ति में वैदिक साहित्य की पुष्टि की है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. यजुर्वेद
2. मुण्डोकपनिषद्
3. गीता
4. ऋग्वेद
5. गीता
6. ऋग्वेद

[7]ऋग्वेद 10/90/3

[8]छान्दोग्य उपनिषद् ३.१२.६